

श्री वीरेश्वर शास्त्री द्राविड़

श्री द्राविड़ महोदय भारत के सुविख्यात विद्वान्, सर्वशास्त्रपारंगत, अपने विषयों के व्याख्याता, सफल अध्यापक, श्रौतस्मार्तकर्मामुष्ठाननिरत, राजवर्ग से सम्मानित, लोकमान्य, महर्षिकल्प एक महात्मा व्यक्ति थे। आपकी पितृ-परम्परा में अनेक पीढ़ियों तक सोमयाजी श्रौत्रिय विद्वान् हुए हैं। आपने भाद्रपद शुक्ला सप्तमी (श्री राधाष्टमी) शनिवार, संवत् 1916 को अर्द्धरात्रि के पश्चात् दीक्षितों के बड़म (ओत्तर) संकेतित द्राविड़ कुल तथा मूलकाड कांचीमण्डल, दक्षिण भारत में जन्म लिया। आपकी माता का नाम लक्ष्मी तथा पिता का नाम सुब्रह्मण्य दीक्षित था। आपका वत्स गौत्र, भार्गव, च्यवन, अम्बान्, और्व और जमदग्नि- ये पाँच प्रवर थे। आप कृष्ण यजुर्वेद के तैत्तिरीय शाखाध्यायी विद्वान् थे।

दक्षिणपथ कांचीमण्डल में मूलकाड नाम से एक प्रसिद्ध ग्राम है। यहाँ श्री वरुणाचल दीक्षित, यज्ञेश्वर दीक्षित, कृष्ण दीक्षित, सुब्रह्मण्य दीक्षित आदि अनेक प्रसिद्ध विद्वानों ने जन्म लिया था। श्री यज्ञेश्वर दीक्षित तक 25 पीढ़ियों में सभी अनुवंशज सोमयाजी थे। आपके दो पुत्र श्री कृष्ण दीक्षित तथा श्री सुब्रह्मण्य दीक्षित उपनयन पश्चात् घनपाठियों के विद्यालय में चार वर्ष तक तैत्तिरीय संहिता, अन्य ब्राह्मण ग्रन्थ व आरण्यक ग्रन्थों का अध्ययन कर कांचीनगर में रथोत्सव देखने गये थे। यहीं से चलपट्टन (समुद्र के समीप विद्यमान नगर) तैलंग, उत्कल, बंग, मिथिला, पाटलिपुत्र, गया तथा अवध होते हुए मण्डली सहित काशी पहुँचे। काशी में गंगा के सोमेश्वर घाट पर विद्यमान मान मन्दिर में आपने विश्राम किया और वहीं रहते हुए घनान्तवेद, न्याय, साहित्य आदि विषयों का अध्ययन किया। जीविका की दृष्टि से आपने यहीं ऋत्विक् कर्म प्रारम्भ किया। श्रीअप्पय दीक्षित के छोटे अनुवंशज श्री हरिशंकर दीक्षित की दौहित्री तथा बज्रटंक कृष्ण शास्त्री की पुत्री लक्ष्मी के साथ आपका पाणिग्रहण हुआ। आपके दो पुत्रियों में से ज्येष्ठ पुत्री का विवाह आठ वर्ष की अवस्था में ही जयपुर राजगुरु मन्वाजी श्री कामनाथजी के साथ सम्पन्न हुआ। दो कन्याओं के जन्म लेने के उपरान्त श्री सुब्रह्मण्य दीक्षित अपने परिव्राजक गुरु के आदेश से आत्मवीरेश्वर महादेव की उपासना में लीन हुए। स्कन्दपुराणान्तर्गत काशी खण्ड में प्रोक्त वीरेश्वर स्तोत्र का पाठ करने से दो वर्ष पश्चात् आपके पुत्र उत्पन्न हुआ और आपने उसका नाम 'वीरेश्वर' रखा। जन्म के वात् आपके नेत्र मुंदे हुए थे, जो कुलदेव के पूजन का व्रत लेने के पश्चात् खुले थे। पश्चात् बाल्यकाल में आप उदर रोग से पीड़ित रहते थे, जिसे श्रीविधु बाबू बंगवैद्य तथा श्री कृष्णशास्त्री तैलंग ने उपचार कर शान्त किया था। आपके नाना का नाम भी सुब्रह्मण्य शास्त्री था, जिनके पुत्र श्री नारायण शास्त्री बहुत विख्यात विद्वान् हुए हैं।

श्री द्राविड़ की दूसरी भगिनी सरस्वती का पाणिग्रहण भी जयपुर में ही श्री विश्वनाथ शास्त्री के साथ सम्पन्न हुआ था। आप श्री कामनाथ शास्त्री की बड़ी बहन मंगला देवी और उसके पति श्री साम्ब शास्त्री के मध्यम पुत्र थे अर्थात् श्री कामनाथ शास्त्री के भागिनेय थे। श्री कामनाथ शास्त्री व उनकी पत्नी श्रीमती गंगादेवी ने सन्तान न होने से श्री विश्वनाथ शास्त्री को अपना उत्तराधिकारी (दत्तक पुत्र) बना लिया था। जैसाकि बताया जा चुका है, श्रीमती गंगादेवी भी सुब्रह्मण्य शास्त्री दीक्षित की ज्येष्ठ पुत्री थी और ये जयपुर महाराज की राजमहिषी को मन्त्रोपदेश करने के कारण गुराणीजी के नाम से प्रसिद्ध थीं।

पाँच वर्ष की अवस्था में मातुल श्री पापा शास्त्री (श्री नारायण शास्त्री) ने आपका विद्यारम्भ संस्कार किया। अपनी दोनों पुत्रियों के आग्रह पर आपकी माता श्रीमती लक्ष्मी दीक्षित आपको लेकर जयपुर आ गईं। आपकी छोटी बहन सरस्वती देवी अल्पवयस्का थी; अतः माता उनकी देख-रेख के लिए जयपुर में तीन वर्ष तक रहीं। इन वर्षों में श्री शास्त्री ने संस्कृत कालेज, जयपुर के अध्यक्ष श्री रामभजजी सारस्वत के पास अमरकोष, सिद्धान्तकौमुदी आदि ग्रन्थों का अध्ययन प्रारम्भ किया। उपनयन संस्कार के लिए माता आपको पुनः काशी ले गईं। वहाँ अष्टम वर्ष में वैशाख शुक्ला द्वादशी सम्वत् 1924 को आपका उपनयन हुआ। आपने वेदाध्ययन प्रारम्भ किया। जब आपकी बड़ी बहन का सीमन्तोत्सव हुआ, तब आप पुनः जयपुर आये, परन्तु अधिक न रह सके और अपने मातुल पुत्र के उपनयन व मातुल पुत्री के विवाह पर पुनः काशी लौट गये। श्री साम्ब शास्त्री ने आपके अध्ययन की व्यवस्था की और आपको श्री नैने बालकृष्ण शास्त्री भट्ट की पाठशाला में प्रविष्ट करा दिया था। वहाँ छः मास में केवल तीन प्रपाठक का अध्ययन ही सम्पन्न हो सका था। इससे असन्तुष्ट होकर श्री पापा शास्त्री ने आपको महाविद्वान् श्रीराम शास्त्री खरे की पाठशाला में प्रविष्ट करा दिया। वेद के विद्वान् श्री शंकर नारायण शास्त्री द्राविड़ के पास आपने वेदाध्ययन किया। यहाँ से अध्ययन कर गुरुजी के वार्धक्य के कारण आप उन्हीं के आदेश से सरयूपारीण विद्वान् श्री यागेश्वर शर्मा के पास जाकर अध्ययन करने लगे। इसके पश्चात् आपके माता-पिता का कुछ ही दिनों के अन्तर पर निधन हो जाने से आप के अध्ययन में विघ्न उपस्थित हो गया। फिर भी गुरुजी की प्रेरणा से कुछ अध्ययन चलता रहा।

कौण्डिन्यगोत्री बोधायनसूत्रानुयायी, क्रमान्तवेदपाठी, व्याकरण तथा साहित्य के विद्वान् पं. श्री राजेश्वर शास्त्री की कन्या भवानी से आपका विवाह वैशाख कृष्णा 2 सम्वत् 1929 में सम्पन्न हुआ। श्री राजेश्वर शास्त्री 'नागेश शास्त्री' के नाम से प्रसिद्ध थे तथा श्री शंकर शास्त्री एवं मैसूर राज्य के अन्नसत्राध्यक्ष श्री सुब्रह्मण्य शास्त्री के वंशज थे। आपके विवाह में आपकी भगिनी गंगा देवी ने जयपुर महारानी से 1500 रु. की आर्थिक सहायता दिलवाई थी। विवाह के उपरान्त आपका अध्ययन पुनः प्रारम्भ हुआ। आप पं. योगेश्वर शास्त्री के पास विभिन्न विषयों का अध्ययन करने के लिए नियमित रूप से जाने लगे। आपके सहाध्यायियों में मातुलपुत्र के अतिरिक्त श्री गणेश शास्त्री गाडगिल, श्री भिक्षु शास्त्री मौनी तथा श्री राम शास्त्री तैलंग के नाम उल्लेखनीय हैं। आपने साढ़े चार वर्षों में सिद्धान्तकौमुदी पर पूर्णाधिकार कर

लिया और फिर मनोरमा, अर्थसंग्रह, हेमवती, परिभाषेन्दुशेखर, गोविन्दाचार्य कृत चन्द्रिका व्याख्या सहित शब्देन्दुशेखर, कैयट कृत टीका सहित नवाह्निकभाष्य और अंगाधिकारभाष्य पर पूर्णाधिकार प्राप्त कर लिया। गुरुजी के घर अध्ययन करने के अतिरिक्त आप मामाजी के घर पर भी स्वतन्त्र रूप से अध्ययन किया करते थे, जिनमें आपने सम्पूर्ण अष्टाध्यायी, तर्कसंग्रह, न्यायबोधिनी, माघकाव्य, कुमारसम्भव, मेघदूत, शाकुन्तल, उत्तररामचरित, भारतचम्पू, नृसिंहचम्पू एवं रामायणचम्पू आदि ग्रन्थों का अध्ययन किया। साथ ही नैषध, माथुरी पंचलक्षणीया जागदीशी, सिंहव्याघ्रलक्षण, कुवलयानन्द, काव्यप्रकाश, साहित्यदर्पण आदि महत्त्वपूर्ण ग्रन्थों का भी अध्ययन किया। इसी प्रकार श्री बालशास्त्री रानाडे से आपने व्युत्पत्तिवाद, शक्तिवाद, सपरिष्कार परिभाषेन्दुशेखर, शब्देन्दुशेखर, विषयतावा, ब्रह्मसूत्र शांकरभाष्य का अध्ययन किया।

अध्ययनकाल में ही आपकी कनिष्ठ भगिनी सरस्वती का अचानक देहान्त हो गया और आपकी पत्नी भी अपस्मार रोग से आक्रान्त हो गईं। बहुत उपचार करने के पश्चात् भी रोग शान्त न हुआ और दिवंगत हो गईं। अनेक सांसारिक कष्टों को सहन करते हुए भी आपने अपना अध्ययन क्रम न छोड़ा और जयपुर चले आये। यहाँ पहुँचने पर आपने अध्यापन कार्य प्रारम्भ किया। सर्वप्रथम आप संस्कृत कालेज, जयपुर में साहित्याध्यापक नियुक्त हुए, जहाँ आपने 8 अगस्त, 1896 तक अध्यापन किया। इसके पश्चात् आप महाराजा कालेज, जयपुर में संस्कृत के प्राध्यापक रहे और वहीं से सेवानिवृत्त हुए। म.म. पं. श्री गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी ने जो आपका उल्लेख किया है, उससे ज्ञात होता है कि कालान्तर में शिक्षा विभाग के अधिकारी आपकी सलाह से ही कार्य किया करते थे। तत्कालीन निदेशक श्री मखनलालजी आप से बहुत अधिक प्रभावित थे और सम्मान किया करते थे। अवकाश प्राप्त करने पर आप अपने घर पर ही अनेक व्यक्तियों को निःशुल्क अध्यापन किया करते थे। आपके पास स्वतन्त्र रूप से अध्ययन करने वाले अनेक विद्वानों में पं. श्री जगदीश शर्मा दाधीच, भूतपूर्व साहित्य प्राध्यापक, संस्कृत कालेज, जयपुर का नाम उल्लेखनीय है, जो आपके द्वारा संस्थापित वीरेश्वर पुस्तकालय के अवैतनिक मंत्री रह चुके हैं। आपने काशी तथा जयपुर में अपने नाम से एक पुस्तकालय की स्थापना की थी, जिसका नाम वीरेश्वर पुस्तकालय है। आपके रचनात्मक कार्य के सम्बन्ध में- (1) श्रीधरी (शब्देन्दुशेखर की टीका), (2) विषमी (शब्देन्दुशेखर की टीका), विवरण (कैयट महाभाष्य का प्रथम व द्वितीय अध्याय) और भोज की सरस्वती कंठाभरण आदि ग्रन्थों का सम्पादन किया था ऐसा उल्लेख मिलता है। इनमें सरस्वती कंठाभरण वैशाख शुक्ला अष्टमी संवत् 1943 को जैन प्रभाकर मुद्रणालय, काशी से प्रकाशित है। आप अत्यन्त प्रतिभावान्, वैदुष्यसम्पन्न, शान्त विद्वान् थे। आपका अप्रकाशित रचनात्मक कार्य अब उपलब्ध नहीं है।

